© UNIVERSAL RESEARCH REPORTS | REFEREED | PEER REVIEWED
ISSN : 2348 - 5612 | Volume : 05 , Issue : 01 | January – March 2018

भारतीय सभ्यता में नारी का महत्व

Seema Punia, MA (Sanskrit literature), Mphil (Sanskrit), seemapunia2011@gmail.com

सारांश

भारत में ही नहीं अपितु संसार की विभिन्न संस्कृतियों के निर्माण में नारी का योगदान अति महत्वपूर्ण रहा है तथा युगों से ही किसी भी राष्ट्र की संस्कृति का मुख्य मापदंड भी नारी की स्थिति ही रही है। यही कारण है कि नारी की स्थिति में होने वाले परिवर्तन प्रत्येक युग के सामाजिक चिंतकों के लिए चिंतन के विषय रहे हैं। सत्य ही कहा गया है कि नारी शिक्षित है तो वह अपनी संतान को अच्छी शिक्षा देकर एक योग्य एवं संपन्न व्यक्ति बना सकती है। यदि नारी ही संकीर्ण भावना से ग्रस्त रहे तो वह अपनी संतान को कैसे परिवार एवं राष्ट्र के लिए सचेत कर सकती है। सामाजिक परंपराओं में परिवर्तन के साथ-साथ नारी की स्थिति में भी परिवर्तन हुए हैं। इसीलिए प्रत्येक युग के व्यवस्थाकारों चिंतकों एवं साहित्यकारों के समक्ष नारी की स्थिति के विषय में मन वैपरीत्य पाया जाना स्वभाविक है।

प्रस्तावना

नारी का महत्व एक कन्या के रूप में-

प्राचीन भारतीय सामाजिक व्यवस्था में पुत्र की प्राप्ति परिवार के जनों को अधिक प्रसन्नता प्रदान करती थी क्योंकि कन्या को पुत्र की अपेक्षा निम्न माना जाता था। इसके पीछे भी बहुत सी मान्यताएं थी जिनमें से एक तो वंश चलाने के लिए दूसरा योद्धाओं की आवश्यकता के लिए। परंतु उपनिषद काल में वैदिक युग की अपेक्षा कन्या के जन्म को कम उपेक्षित माना गया है। योग्य पुत्र की अपेक्षा योग्य कन्या का जन्म माता पिता अधिक श्रेयस्कर समझते थे।

अथ य इच्छेद् में पण्डिता जायेत ।

तिलौदनों पाचयित्वा अश्नीयातामिति ।।[1]

रामायण, महाभारत काल में भी कन्या को गोद लेने का उल्लेख मिलता है। पुत्र जहां पिता का उत्तराधिकारी होता था वही पुत्र के नाम पर जिन कार्यों का संपादन वह करता था, उन्हें कन्या का पुत्र

था दौहित्र भी कर सकता था। दौहित्र अपने मातामही तथा पितामह (नाना-नानी) की अंत्येष्टि क्रिया करने का उत्तराधिकारी था।

ददाति हि स पिण्डं वै पितुर्मातामहस्य च ।

पुत्रदौहित्रयोर्नेह विशेषो धर्मत : स्मृत : ।।[2]

कुछ स्थानों पर पुत्री को ही पुत्र माना गया है और वह अपने पिता की संपत्ति और वह अपने राज्य की भी उत्तराधिकारी होती थी। महाभारत से ज्ञात होता है कि कन्या प्राप्ति के लिए लोग उत्सुक रहते थे और इस खुशी में उत्सव बनाते थे।

स्त्रियो द्वीतीयं जायन्ते। [3]

शिक्षा और नारी -

वैदिक काल से लेकर ईसवी शती के आरंभ तक कन्या का वेदाध्ययन उपनयन संस्कार से आरंभ होता था। वैदिक काल में लोपमुद्रा, विश्ववारा, सिकता तथा घोषा आदि अनेक विदेशी नारियों ने वैदिक मंत्रों की रचना की थी और ऋषि की उपाधि से विभूषित हुई थी। सामदेव में भी निवावरी, गोपायना व आकृष्टामाप आदि अनेक विदुषी नारियों का उल्लेख मिलता है अथर्ववेद में उल्लेख मिलता है कि विवाह योग्य बनने के लिए भी अध्ययन की अनिवार्यता थी।

ब्रह्मचर्येण कन्यांन युवा विन्दते पतिम् ।[4]

कन्याओं के लिए वेदाध्ययन अनिवार्य था क्योंकि स्त्रियों को भी नियमित रूप से अधिक प्रार्थनाएं करनी पड़ती थी और यज्ञादि में मंत्रोच्चारण करती थी। रामायण के एक विवरणानुसार सीता नियमित रूपेण संध्या पाठ करती थी।

संध्याकालमना : श्यामा ध्रुवमेष्यति जानकी ।

नदी चेमां शुभजलां संध्यार्थे वरवर्णिनी ।।[5]

विवाह संस्कार

मनु तथा याज्ञवल्क्य की व्यवस्था ने भी स्त्रियों को शिक्षा पर अत्यंत आघात पहुंचाया। इन्होंने स्त्रियों के विवाह संस्कार को स्वीकार किया और पति की सेवा को ही गुरुकुल निवास बना दिया। यही वह काल था जब स्त्रियों की परनिर्भरता का आरंभ होता है।

वैवाहिको विधि : स्त्रीणां संस्कारों वैदिक : स्मृत : ।

पतिसेवा गुरौ वासों गृहार्थोऽग्निपरिक्रिया ।।[6]

समय के साथ-साथ स्त्रियों के लिए विवाह संस्कार ही उपनयन संस्कार माना जाने लगा था। किंतु वैदिक युग में स्त्रियों का विवाह के पूर्ण युवा होने पर ही होता था तथा कन्याओं को वर चयन की पूर्ण स्वतंत्रता थी। आधुनिक युग की कन्या भी आत्म-निर्भर होने पर ही विवाह संस्कार के बंधन में बनना पसंद कर रही हैं।

पत्नी के रूप में महत्व -

वैदिक काल में पत्नी के रूप में नारी रानी की तरह सम्मानित थी। श्वसुर के घर में वह बड़े लोगों पर राज्य करने लगती थी।

सम्राज्ञी श्वसुरेभ्य सम्राज्ञी अधिदेवृषु ।[7]

कोई भी पुरुष बिना पत्नी के देव, पितृ एवं ऋषि- ये विविध ऋणों से उऋण नहीं हो सकता था। अपत्नीक पति को यज्ञ का अधिकार ही नहीं था। वैदिक काल में पति को धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष की प्राप्ति पत्नी के बिना संभव नहीं थी।

"अपज्ञीयो वैषयो ऽ पत्नीक" : ।।"[8]

रघुवंश में अश्वमेध यज्ञ में सीता की अनुपस्थिति में उसकी स्वर्णमयी में मूर्ति का रखा जाना उपयुक्त कथन का समर्थन करता है।

अथर्ववेद में भी पत्नी को गृह स्वामिनी कहा गया है। सभी कार्यों में पत्नी के विचार लिए जाते थे। मनुस्मृति में भी नारी एवं पुरुष को शारीरिक रूप से भिन्न-भिन्न होने पर भी एक रूप माना गया है। ब्राह्मण ग्रंथों में नारी एवं पुरुष का संबंध मित्रवत् माना गया है।

"सरवाह जाया" ।[9]

महाभारत में पत्नी को पति के लिए भगवान का दिया हुआ सच्चा मित्र बताया गया है।

"भार्या श्रेष्टतम : सखा ।"[10]

मातृ रूप में नारी का महत्व -

समाज में माता का स्थान गुरु और पिता दोनों से ऊंचा माना जाता था।

नास्ति वेदात्परं शास्त्रं, नास्ति मातृसमोगुरु : ।

नास्ति भूमिसमं दानं, नास्ति मातृसमोगुरु : ।। [11]

पत्नी का वैधव्य रूप -

प्राचीन साहित्य में विधवा शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है किंतु इस बात का स्पष्ट बोध नहीं होता कि उसकी (विधवा) सामाजिक स्थिति कैसी थी? केवल पराशर ही ऐसे स्मृतिकार थे जिन्होंने कुछ स्थितियों में पुनर्विवाह की अनुमति दी थी। रामायण एवं महाभारत में कौशल्या-सुमित्रा-कैकेयी-कुन्ती-उत्तरा आदि विधवा नारियों के पुनर्विवाह का उल्लेख नहीं मिलता किंतु उनके सम्मान में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं आई।

स्त्री के साम्पत्तिक अधिकार -

वैदिक युग में स्त्री धन के उत्तराधिकार के प्रश्न पर पुत्रियों को प्राथमिकता दी गई है। विवाह उपरांत पत्नी पति के दाएं संपत्ति की उत्तराधिकारी थी। जैमिनी ने मीमांसा दर्शन में स्त्रियों के संपत्ति के अधिकारों का समर्थन किया है।[12] याज्ञवल्क्य ने भी छ: प्रकार के स्त्रीधन बताए हैं।

"पितृमातृ पतिमातृ दत्तमध्यग्न्यु पागतम् ।

अधिवेद निकाद्यं च स्त्रीधनं परिकीर्तितम् "।।[13]

स्त्रीधन तथा शुल्क पर से पत्नी के अधिकार की समाप्ति का भी विधान था। कौटिल्य के अनुसार जो स्त्री राज-विरोधी बातें करती है, अपने पति को छोड़कर दूसरे व्यक्ति के पास जाती है तो उसका स्त्रीधन पर स्वामित्व समाप्त हो जाता था।[14]

निष्कर्ष -

प्राचीन साहित्य में "यत्र नार्थस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता:" जैसी नारी पक्ष को सफल बनाने वाली भावनाओं का समावेश रहा है। आधुनिक युग की नारी के समान ही प्राचीन समय में भी स्त्रियां पूर्ण स्वतंत्र थी। नारी कन्या के रूप में, पत्नी के रूप में माता के रूप में, दया, करुणा, और त्याग की प्रतिमूर्ति मानी गयी। आज भी नारी करुणा रूप में, शत्रु के प्रति क्षमा रूप में और संपूर्ण संसार के प्रति जगद्धात्री के रूप में प्रकाशित है। नारी की इसी भावना को सम्मान देने के लिए आज का युग प्रतिवर्ष 8 मार्च को 'अंतर्राष्ट्रीय महिला' दिवस के रूप में मनाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची -

1. बृहदारण्यक उपनिषद् , 4. 4. 18
2. महाभारत , 13. 45. 14
3. महाभारत , 13. 87. 10
4. अथर्ववेद , 11. 5. 18
5. रामायण , 5. 14. 49
6. मनुस्मृति , 2. 67
7. ऋग्वेद , 10. 85. 46
8. शतपथ ब्राह्मण ,
9. ऐतरेय ब्राह्मण ,
10. महाभारत , 9. 374. 73
11. महाभारत , 13. 106. 65

12. मीमांसा सूत्र , 6. 1. 13-16

13. याज्ञवल्क्य स्मृति , 2. 143-44

14. अर्थशास्त्र , 3. 3. 44